उपसंहार

स्त्री पुरुष एक दूसरे के पूरक होते हैं पर पूरक प्रक्रिया में पुरुष विधेयक और स्त्री निषेधक है। स्त्री की इस निषेधक भूमिका के प्रति पुरुष स्वयं मोह्भाक्त है। शास्त्रज्ञ स्त्री को माया कहते हैं। स्त्री की अपनी संस्कृति है, उसका अपना इतिहास हैं,उसकी परंपरा है,जो पुरुष से भिन्न है। साहित्य के इतिहास में इसे भिन्न तो माना गया है लेकिन भिन्नता को अलग पहचान नहीं दी गयी।इतिहास जगत में भी स्त्री पुरुष संबंधों पर विवेचन करते वक़्त पुरुष की सत्ता स्वीकृत हुई तथा स्त्री के सार तत्वों की खोज की गयी। सत्ता की शक्ति स्त्री को माना गया,लेकिन इस शक्ति का आधार पुरुष था,अलग से शक्ति को सत्ता नहीं थी क्योंकि सत्ता को शक्ति की जरूरत थी इसलिए स्त्री शक्ति को हथियाना चाहा।

स्त्रीवादी विमर्श स्त्री की मानवीय अस्मिता की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध है।वह स्त्री की उपस्थिति को लक्षित करने वाले इस कालजयी मान्यता को स्वीकारता है कि स्त्री आधी दुनिया है लेकिन तराजू लेकर और पैमाना लेकर स्त्री पुरुष के लिए जमीन और आसमान, घर और समाज, संसद और सड़क को आधा आधा बाँट देना नहीं चाहता।

साहित्य समाज का दर्पण है। जब वह युगीन यथार्थ को प्रतिबिंबित करता है तो उसका लक्ष्य दोहरा होता है। एक युगीन विकृतियों ,विसंगियों और रुग्णताओं को विश्लेषण का विषय बना कर उनके निवारण हेतु समुचित समाधान खोजना। इसको अपने अनुभव सत्य से गुजर कर बेहतर भविष्य के निर्माण हेतु भावी पीढ़ी का दिशा निर्देश करना। 'विचारों' की स्वतंत्रता इसी में है की वे स्पष्ट रूप से प्रयोग किये जाए ना कि सत्य होते हुए दबा दिए जाए।'

हम किसी भी विचार,संस्कृति और इतिहास को तब तक गंभीरतापूर्वक नहीं समझ पाएंगे ,जब तक की उनके प्रभाव का विश्लेषण न करें। प्रभाव का विश्लेषण करते ही सत्ता की संस्कृति समझ में आती है की वो कैसे खुद को स्थापित करने के लिए सबको एक ही सांचे में ढालने की चेष्टा करता है। वह जाति व्यवस्था में आधिपत्य की वर्चस्व एवं उसकी निरंतरता को बनाये रखना चाहता है। स्त्रीकरण एक अमानवीय व्यवस्था है , जिसके तह पुरुष ने अपने विचारों और अवधारणा के अनुसार स्त्री का निर्माण किया है। ऐसे निर्माण में स्वाभाविक है की स्त्री की सहमती नहीं रही होगी।साहित्यिक जगत में भी लेखक ने अपनी कल्पना के अनुसार स्त्री स्वरुप का निर्धारण किया है। स्त्री ने स्वयं अपने बारे में,अपनी भावना ,अपने इतिहास और अपनी इच्छा,अनिच्छा के बारे में कुछ कहा है और न ही उससे कमी पूछा गया है।

पुरुष की सम्वार्धित चेतना ,आधिपत्य की भावना,स्त्री देह के प्रति पूंजीकरण की प्रवृत्ति ने न केवल साहित्य जगत में स्त्री की नुमाइंदगी का प्रयास किया,उसके अनुभवों की प्रमाणिकता पर न केवल अपना मत जाहिर किया बल्कि अपने स्त्री विरोधी दृष्टिकोण और लेखकीय विद्वेष में एक ऐसा पाठक वर्ग भी तैयार किया जो स्त्री की कमजोरियों पर चुहलवाजियों से बाज नहीं आता।

संस्कृति का प्रचालन नागरिक समाज के माध्यम से होता है और विचारक आलोचक संस्थाएं आदि भी सीधे शासन प्रशासन से नहीं,बल्कि आम जन सहमती के माध्यम से प्रभावी होने की चेष्टा करती है। किसी भी समाज में एक विशेष प्रकार की संस्कृति दूसरी संस्कृतियों पर हावी होने की चेष्टा करती है। इसी प्रकार विचार जगत में भी कुछ विचार दूसरे विचारों की तुलना में ज्यादा प्रभावशाली माने जाते हैं।यह वैचारिक महिमामंडन सांस्कृतिक नेतृत्व की स्थापित करता है। ग्राम्शी ने इसे वर्चस्व की संज्ञा दी है और इसे समझना की समाज के सांस्कृतिक जीवन के लिए आवश्यक माना है। यह बात पितृसत्ता पर भी लागू होती है क्योंकि पुरुष स्वयं को व्यक्ति विचार और व्यवस्था का प्रतीक मानता आया है और स्त्री को अन्य वस्तु योग्य और अज्ञेय।

मृदुला गर्ग के अनुसार-

“*When it came to exercise power in the 1970's the term of reference for a feminist writer was identity . The objective was to replace the literary and social canons practiced by patriarchy through collective activism and individual literary work. Since a feeling of inferiority was a necessary adjunct of the concept of second sex, it gave rise to anger, expressing itself in tales of woe , injury , exploitation, rape and suppression at the hands of males.*”[1]

स्त्री लेखन में स्त्री समस्या के प्रतिनिधि की तीन मुख्य बातें हैं। पहली,क्या स्त्री लेखन द्वारा स्त्री जाती का सही प्रतिनिधित्व संभव है ? राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसमें निहित तनाव से हम काफी वाकिफ हैं। दूसरी,स्त्री लेखन अपनी अलग पहचान के साथ समानांतर धारा के रूप में कितनी दूर तक जा पाएगी ? विशेषकर इतिहासकार के अध्ययनों के लिए क्या यह प्रमाणिक विषय वस्तु उपलब्ध कर पायेंगे ?तीसरी,पितृसत्ता के बदले क्या अपने लेखन में स्त्री किसी अधिक अमानवीय व्यवस्था को

[1] garg,mridula,intervention of women’s writing in making of literature,indian literature,jstore vol 57,no 4,pg.276

प्रस्तुत करने में सक्षम है ? यहाँ स्त्री को विशद रूप अपने में जीवन सम्बन्धी गान , मूल्यबोध परंपरा आदि पर विचार करना होगा ताकि उनकी राजनितिक समझ भी गहरी हो सके। **डा बच्चन सिंह** द्वारा रचित 'हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास ' में 'लेखिकाओं की दुनिया' के बारे में पढ़ा जाता है :

" लेखिकाओं की दुनिया को अलग से विश्लेषित करने की आवश्यकता इसलिए है की यह पुरुषों की दुनिया से थोड़ी भिन्न होती है। यही कारण है की आजकल आलोचना में स्त्रीवादी आलोचन का चलन हो गया है। मन्नू भंडारी, उषा प्रियवंदा , कृष्णा सोबती छठे दशक से लिखते चली आ रही हैं ' अब भी लिख रही हैं। "[2]

उपर्युक्त शोध में तीन विभिन्न देशों की अलग अलग परिवेश और वातावरण से जुड़ी लेखिकाओं का चयन किया गया है। चूँकि भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश दक्षिण एशिया देश के भाग हैं। इन देशों में सामाजिक, साहित्यिक,राजनीतिक स्तर पर परस्पर अंतर्संबंध हैं। जो उनके लेखन पद्धति पर दृष्टव्य होता है। साहित्य की रचना समाज के परिप्रेक्ष्य में होती है। इन तीनो देशों में सत्ता ने वहां के साहित्य पर अपना प्रभाव छोड़ा है,परिणामस्वरूप यह देखा जाता है लेखिकाओं ने भी साहित्य के माध्यम से प्रतिरोध स्वर उठाया।

जाया जादवानी स्त्री मन की चितेरी कलाकार हैं।वे कहती हैं *" यह जो हम आग की बातें लिखते हैं न , अपना आप जला कर क्या होता है इसमें ? दूसरे सिर्फ सेंकते हैं , अपने आप को हमारी भट्टी में और सेंक कर बहार चले जाते हैं - हलके गर्म , कुरकुरे। राख होना तो हमारी नियति है। "*

इन तीनो लेखिकाओं की रचना में ने पितृसत्ता ने उस तत्कालीन सामाजिक और सांस्कृतिक परंपरा से भी अपना विभेद स्थापित किया है जिसमे देश के अधिकांश लोग रहते बसते हैं। इस नयी पितृसत्ता की 'नयी' स्त्री उन आम स्त्री से जो कर्कश,झगड़ालू,उच्च नैतिक संवेदनाओं से रहित , सेक्स के मामलों में स्वछंद और पुरुषों अमानवीय शारीरिक दमन का शिकार थी । विमर्श का उद्भव ही जीवंत बहस के साथ हुई है। किसी भी समस्या का स्थिति को एक कोण से न देखकर भिन्न मानसिकताओं , दृष्टियों , संस्कारों और वैचारिक प्रतिबद्धताओं का समाहार करते हुए उलट पुलट कर देखना , उसे समग्रता से समझने की कोशिश करना और फिर मानवीय सन्दर्भों में निष्कर्ष प्राप्ति की चेष्टा करना।

---

2 खेतान,प्रभा,उपनिवेश में स्त्री,पृष्ठ संख्या ४२

इस प्रक्रिया के लेखन में निष्कर्ष अंतिम निर्णय की तरह थोपे नहीं जाते वरन उन्हें समय के साथ मुठभेड़ कर नया स्वरुप ग्रहण करने की स्वतंत्रता दी जाती है। विमर्श को अंग्रेजी में " Discourse" शब्द कहा जाता है जिसका अर्थ होता है :

"A long and serious treatment or discussion of subject and speech or writing. Discourses on embodiment practices were wrapped up in argument about the multicorporeality and health of the human body, the cultivation of transcendence and the physical display of perfection of control as a mark of 'nobility."[3]

नासिरा शर्मा ,जाहिदा हिना और तसलीमा नसरीन से स्त्री प्रश्न के खोज रूप के समाधान के लिए महत्वपूर्ण मिसाल के तौर पर स्त्री शिक्षा का महत्व स्थापित किया है। इनके प्रतिरोधी स्वर के पीछे का सत्य इनकी बौद्धिक क्षमता ही है। आरम्भ में स्त्रियों को किताबी ज्ञान से अलग रखने पर जो रूढ़िवादी जोर था , वह जल्द ही खत्म हो गया। जाहिदा हिना और नासिरा शर्मा और तसलीमा पढ़ी लिखी परिवार से थी। उनके साहित्यिक माहौल बचपन से ही प्राप्त था। इस कारण तीनो ने अपने जीविका को एक तरफ कर के लेखन को चुना। स्त्री जीवन और उनके जीवन के त्रासदियों को करीब से महसूस किया है। यही कारण है की इनके क्रिया जगत के केंद्र में स्त्री जीवन मुख्य रूप से रहे हैं। एक ओर जाहिदा हिना मुद्दों पर बात करती हैं तो दूसरी ओर तसलीमा सत्ता को ही ख़ारिज कर देती है। धर्म,नियम,कानून सब को किसी विरोधी जंजीर के रूप में देखती है और लेखन से विरोध दर्ज करती हैं। पेशेवर डाक्टरी को छोड़ साहित्य के क्षेत्र में एक परिवर्तन के सूचक के रूप में आई और समाज में जहां परिवर्तन की बात आती है टकराहट स्वर पैदा होने लगती हैं। यही कारण है की उनका लेखन विवादित और फतवे के एलान के नीचे रहा है। उनके लेखन का दो रूप में विश्लेषण किया गा है :

१.) The first relates to bourgeois notions decorum, prosperity and decency that shape the norm of conduct for Bangladeshi Women.
The terms "obscene', 'blasphemous', and ' pornographic' have been used to describe her work. These terms are instantiated are subject to the political mood and the transnational locations of reading public.
The Second Category of analysis relates to the suspicion of domination that characterizes South Asian transnational relations. Bangladeshi Indian and larger Muslim Hindus social relation in South Asia are characterized by suspicion and fear on the part of Subjects who

[3] Chatterjee,indrani,when sexuality floated free of histories in south asia,the journal of Asian studies,vol.71,p

perceive themselves to be under threat.[4]

दक्षिण एशियाई देश में केंद्र में धर्म स्थापित है। यह धर्म सदैव स्त्री के विरोधी पक्ष में खड़ा रहा है। वहां का वातावरण धर्म की भूमिका को लेकर एक रूढ़, अप्रासंगिक और संकीर्ण नजरिये से मुक्त नजर आता है। सत्ता के परंपरागत केन्द्रों और नए मूल्यों और वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान से लैस नए उभरते वर्ग के बीच संघर्ष में धर्म एक हथियार के रूप में जिस तरह से हमारे देश में इस्तेमाल हो रहा है वह किसी भी प्रगति वाली समाज के लिए घातक है। धर्म को ऐसे रूप में देखा जा सकता है जहां दायित्वों का विकेंद्रीकरण हुआ है। पराधीनता धर्म का सत्य है और जो हमेशा स्त्रियों को प्रभावित करती है। कही स्त्रियाँ बुर्के में बंद हैं तो कही घुटती रहती हैं तो कही चर्च की मदर - सिस्टर हैं जिन्हें अपने तन मन का अधिकार नहीं है। स्त्रियाँ तो मनुष्य के ही रूप हैं जो परदे में से भी ऐलान करती रही है की स्वार्थी पंडितों , पुरुषवादी ऋषियों, मुनियों और कठमुल्लों की करतूतें हमें गुलाम बनाने की साजिश रचती है जिससे उनके राज्यधीश प्रसन्न होते रहे हैं। हमें हज़ारों साल पीछे ले जाने का श्रेय पुरातानपंथी धर्म के सिर जाता है जिसके चलते हिन्दू मुस्लिम लड़ रहे हैं और जीत से परे हम निरीह जनता क्षत विक्षत होकर हाड मोम के लोथड़ों में तबाह हो रही है।

नारीवादी एक ऐसी अतिचर्चित प्रचलित प्रवृत्ति है जिसकी कोई एक सर्वमान्य व्याख्या या प्रमाणिक परिभाषा नहीं।दरअसल यह एक अनेकार्थी बहुआयामी तथा व्यापक आन्दोलन है जिसमें विविध विचार और रवैये सक्रिय रहे है,पुरुष प्रधान व्यवस्था तथा पितृ परिवार से लेकर आर्थिक शोषण और यौन उत्पीड़न,सामाजिक दमन और अधिकार हनन,क़ानूनी भेद-भाव और दोहरे नैतिक मापदंडों तथा पारिवारिक वैवाहिक सम्बन्धों ,व्यवसाय –व्यापार ,सत्ताधिकार तथा यौन-व्यवहार तक सब कुछ इसमें सम्मलित है, इन सब के केंद्र में है स्त्री अस्तित्व और अस्मिता का प्रश्न जिसके इर्द गिर्द समस्त समस्याए और असमानताएँ मंडराती रहती है। इक्कीसवी सदी की शुरुआत में नारी मुक्ति आन्दोलन खुद को नए मोड़ पर खड़ा पा रहा है। बाजारवाद और खुली अर्थव्यवस्था ने स्त्री पुरुष सम्बन्धों के समीकरण को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। इसके ठोस प्रमाण अब खुल कर सामने आने लगे हैं। महिलाएं समाज में अपनी स्थिति,अधिकारों और समस्याओं को लेकर अधिक मुखरित हुई है। २० साल पहले यानि अस्सी के दशक में नारी मुक्ति आन्दोलन को कुछ अवरोध का सामना करना पड़ा था। महिलाएं स्वयं को 'नारीवादी' या नारी मुक्ति का पक्ष्दाहार कहलाने में सकुचाने लगी थी। वक़्त के साथ विचारधारा में भी

[4] Loomba,ania,rittya A.Lukose,south Asian feminism,page no 206

परिवर्तान हुआ। समाजिक तौर पर ही नहीं , बल्कि राजनितिक और आर्थिक क्षेत्र में स्त्रियों के महत्व को अब मान्यता प्राप्त हो रही है। राजनैतिक क्षेत्र में , अमेरिकी आंकड़ों के अनुसार , बिल क्लिंटन अमेरिका के राष्ट्रपति इसलिए बने क्योंकि उनको महिलाओं का अधिक समर्थन हासिल था और उन्होंने अपने कार्यकाल में कई नारीवादी लगने वाले कदम भी उठाए। कनाडा में भी पहली महिला प्रधानमन्त्री चुनी गयी। ऑस्ट्रेलिया में पॉल कीटिंग इसलिए चुनाव जीते क्योंकि उन्होंने मुस्लिमों की समस्याओं पर सलाह देने के लिए एक विशेष सलाहकार नियुक्त किया था। हमारे देश में भी महिलाएं न केवल अपने काम में सत्ता और अधिकार हासिल कर रही हैं बल्कि इससे भी अहम यह है की वे अपने अधिकारों और शक्ति के प्रति जागरूक हो रही हैं।

दक्षिण एशियाई देश में स्त्रीवाद के समर्थकों और प्रवर्तकों तथा सिद्धांतों में एकमत न होने के कारण इसकी भिन्न व्याख्याएं की जाती रही हैं , जिसके कारण एक प्रमाणिक व्याख्या संभव नहीं है। सर्वप्रथम स्त्रीवाद उन सिद्धांत पर आधारित है की स्त्री एक अलग श्रेणी है जो पुरुष से भिन्न है यानि उनकी जैविक संरचना पुरुष से भिन्न है। दूसरा मत यह है की नारी परिकल्पना एक सामाजिक तथा सांस्कृतिक संरचना है जिसका कारण पितृसत्तात्मक और पुरुष प्रधान समाज है और इसी कारण स्त्री को दूसरे दर्जे का प्राणी समझा जाता है। यदि स्त्री को पुरुष के प्रभुत्व से मुक्त होना है तो उन्हें प्रतिरोध करना होगा। उसे अपने भूमिका को स्वयं ही परिभाषित तथा प्रमाणिक करना होगा।समाज में जिसका वर्चस्व होगा सत्ता भी उसकी ही होगी अर्थात जो निजी है वह राजनीतिक है। इस अर्थ में स्त्री आन्दोलन व्यक्तिगत कर्म न होकर राजनीतिक संघर्ष बन जाता है।

दक्षिण एशियाई देश के साहित्य में स्पष्ट होता है की पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था पर आधारित पुरुष प्रधान संस्थाओं और आर्थिक सामाजिक जागत में उनके वर्चस्व के कारण स्त्री अधीनास्थ स्थिति में रहने को बाध्य है । इसके ठीक विपरीत महिला लेखिकाओं के द्वारा उस सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ जा कर साहित्य में प्रतिरोध दर्ज करना एक सकारात्मक परिवर्तन है। विशेषकर समाज में अब फासीवादी सत्ता सक्रिय हो तो सांप्रदायिक दंगे , धर्मान्धता आदि के कारण स्त्री को अमानवीय कुकृत्यों का सामना करना पड़ता है। इन तीनो देशों में विभाजन के दौरान जघन्य हिंसा महिलाओं साथ हुई।

बलात्कार की घटनाओं में यौनिकता और हिंसा का आपसी सम्बन्ध अभिव्यक्त होता है। पितृसत्ता के सबसे करीब स्त्री ही रहती आई है। यौनिकता के प्रसंग में वह हमेशा एक काम्य वास्तु के रूप में रही में रही है। बचपन से लेकर वृद्धावास्ता तक स्त्री मात्र शारीरिक रूप से असुरक्षित है और पुरुष की

हिंसा का शिकार हो सकती है।जातिकरण,लैंगगिकीकरण और यौनिकता स्त्री के दमन की तीनो प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है।

स्त्री जिस विभेद की राजनीति के खिलाफ अपना संघर्ष शुरू करती है , अंततः वह उसी के गिरफ्त में आ जाती है। स्त्री समुदाय को स्वयं इसे झेलना पीड़ादायक होता है। अधिकतर विशिष्ट और स्थापित स्त्रियाँ स्त्री मुक्ति के प्रति उतनी संवेदनशील नहीं रह जाती,मुख्यधारा से जुड़ने स्त्री अन्य स्त्रियों के साथ तादात्म्य बोध नहीं करती।किसी भी संघर्ष को अनुमति के स्वर तक झेलने और दर से निर्णय देने में आधारभूत फर्क होता है और साहित्य उस फर्क के अंतराल को समाप्त कर देता है। नारी आर्थिक रूप में आत्मनिर्भर होने के लिए जब दहलीज पार करती है तो उसे पता चलता है की घर का यौन विभाजन बाहर समाज में भी दमन करने लगा है।

कानून की दृष्टि से भी स्त्री की हैसियत नगण्य रहती है। बांग्लादेश के क़ानून में बलात्कार के मामले में अकेली औरत की गवाही मान्य नहीं है। दो औरतों की गवाही या एक पुरुष की गवाही मान्य होगी। पाकिस्तान में बलात्कार जैसे अपराध के लिए मृत्यु जैसे कठोर दंड का प्रावधान है।इसकी वास्तविकता यह है की चार मुसलमान गवाही दे तभी दोषी को मृत्यदंड मिलेगा। कानून के नजर में भी औरत और उसकी गवाही का कोई मूल्य नहीं है। कानून से यह अपेक्षा की जाती है की वो हिन्दू मुसलमान,औरत मर्द,अमीर गरीब,उंच-नीच में भेद न करे लेकिन बांग्लादेश,पाकिस्तान जैसे दक्षिण एशियाई देशों में पुरुष के साथ कानून भी महिलाओं के साथ पक्षपात करता है।

तत्कालीन समय में दक्षिण एशियाई देशों के राजनीतिक पक्ष को देखा जाए तो यह महसूस होगा की औरतें अपने लिए जगह बनाने लगी हैं। समानाधिकार की दुहाई देने वाले पुरुष वर्चस्व ने औरत की राजनीति के क्षेत्र में बतौर मुखौटे इस्तेमाल किया है । पाकिस्तान में मंत्री निलोफेर को एक पैराट्रूपर को गले मिलने के अपराध में उसके खिलाफ फतवा निकाला गया था और उसे मंत्री पद गवाना भी पड़ा था। शेख हसीना और खालिदा जिया बांग्लादेश की बागडोर संभाल रही थी पर उसकी स्थिति भी यही है। राजनीति की राह में विरासत के तौर पर आई है। भारत की स्थिति कुछ भिन्न तो है,सिर्फ इसलिए नहीं की यहाँ की राष्ट्रपति एक महिला रह चुकी है। लोकसभा की सभापति भी और विपक्ष की नेता भी एक महिला रही है। औरतें अभी राजनीति में लोकतंत्र और समानिधिकार के दावे का मुखौटा ही अधिक है। अपने पदों पर पुरुषों के राजनीतिक शतरंज के मोहरे के तौर पर अधिक टिकी हुई है।

पाकिस्तान की राजनीति में औरत की स्थिति और भी चिंतनीय है। वहां निर्वाचित परिषद् में स्त्री की उम्र 50 साल से अधिक होना अनिवार्य है। विदेश मंत्री हिना रब्बानी ख़ैर अपवाद के रूप में हैं। वहां सदस्यता के लिए पति की लिखित अनुमति की आवश्यकता होती है। इसका मतलब यह है की घर में जिस तरह औरत पुरुष पर अवलंबित रहती है , उसी तरह राजनीति में भी पुरुष पर अवलंबित रहना होगा।

इस तरह से यह देखा जाता है की धर्म,राजनीति, समाज,यौनिकता के बीच स्त्री की स्वाधीनता दूर हो रही है। निष्कर्ष रूप में यह देखा गया है की तीन देश, तीन समाज और धर्म के केंद्र में स्त्री समस्या आई। पूरे विश्व के समाज,समुदाय और धर्मं में काफी विभिन्नता है परन्तु पितृसत्ता के दबाव में स्त्री अस्तित्व हाशिये पर आ गया है।स्त्री की दुनिया में व्यवस्थित होने और उसके आधार पर पहचाने जाने के पारंपरिक सन्दर्भ को तोड़ना अनिवार्य है। आज स्त्री के स्वत्वहरण और लाभ हरण के मूल में सांस्कृतिक संस्थानों का विकृतीकरण पाते हैं। परिणामस्वरूप सामाजिक दृश्यपटल पर विखंडन,खोखले और टूटे हुए मूल्य , अध बीच में तुड़ी मुड़ी सूखती जीवनधाराएं और दिशाहीन जीवन मिलता है। जिसे हमने अपनी संस्कृति कहकर पहचाना,उसके सभी दरवाजे बंद मिलते हैं और बंद दरवाजों वाला यह दमघोटू माहौल जब संस्कृति का दावा करे तो भला इसके उत्पीडन और दमन में कौन बच सकता है।

संस्कृति यहाँ एक औपनिवेशिक ताकत के रूप में अपना दमन चक्र घूमती है। संस्कृति के नाम पर निरीह स्त्रियों को शोषण झेलना पड़ता है ,जबकि संस्कृति की पहली विशेषता है उसका खुलापन , उसकी उर्वरता, उसकी जीवनदायिनी शक्ति।

स्त्री समाज के हर तबके में घर से लेकर समाज तक में अपनी स्वतंत्र इकाई नहीं है। पाकिस्तान की लेखक जाहिदा हिना,बांग्लादेश की तसलीमा नसरीन और भारत की नासिरा शर्मा ने अपने परिवेश , समाज और समुदाय को एक सशक्त तरीके से अपनी लेखनी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। ये तीनो लेखिकाएं जिस परिवेश और समाज से सम्बन्ध रखती हैं मात्र उस परिवेश की महिलाओं पर चर्चा नहीं की है बल्कि व्यापक रूप से समाज में स्त्री की वास्तविक स्थिति को बताया है। वे जिस स्थान पर खड़ी हैं उस स्थान से पूरे विश्व के मुद्दों को देख रही हैं। तीनो के लेखनी से उठाये हुए मुद्दे किसी विशेष स्थान, धर्मं,समुदाय से जुड़े मुद्दे नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व के मुद्दे हैं।

यह परंपरा से चली आ रही एक पूरी व्यवस्था है,तंत्र है जो औरत की आजादी का अपहरण करता है , उसे व्यक्तित्व को कुंठित करता है और उसकी संभावनाओं का गला घोंट देता है।

यही तंत्र उसके संघर्ष की आग बुझा देता है । इसे पुरुष तंत्र कहा जा सकता है। औरत के हक में तसलीमा ने पुरुषतंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया है :

"पुरुषतंत्र एक तंत्र है जहां नियम कानून पुरुष के पक्ष में हैं, सामाजिक विधि व्यवस्ता पुरुष के पक्ष में है , इस सामाजिक संसार में जो कुछ भी है , सभी कुछ पुरुष के अपने पक्ष में है। सब कुछ पुरुष केन्द्रित है।''

नासिरा शर्मा जब ईरान जाती हैं तब ईरान और इराक में पत्रकारिता के दौरान वहां के समाज को अलग दृष्टिकोण से देखती हैं। तसलीमा नसरीन ने फ्रांस, पेरिस में प्रवासन के दौरान वहां के समाज में स्त्रियों की स्थिति को अलग तरीके से देखा है। जाहिदा हिना ने पाकिस्तान में स्त्री की यातना और संघर्ष और स्त्री की समस्याओं से जुड़े मुद्दों को उठाया। अलग-अलग परिवेश में उठाये गए मुद्दों में स्त्री और धर्म केंद्र में आ गये। धर्म को जब भी केंद्र में लाया गया, तब वह स्त्री के विरोध में रहा है। धर्म के मूल स्वरुप में स्त्री का सम्मानित और समानता पूर्वक स्थान ही प्राप्त नहीं हुआ। पाकिस्तान और बांग्लादेश का जन्म ही धर्म के आधार पर हुआ था, जिस देश का जन्म ही धर्म के आधार पर आधारित होता है और धर्म को केंद्र में रखा जाता है, वहां महिलाएं धर्म के नाम पर शोषित होती हैं। भारत इस मुद्दे पर बांग्लादेश और पाकिस्तान से थोड़ा पीछे है। मूलतः धार्मिक देशों में पहला दर्जा धर्म को मिलता है और दूसरा दर्जा अधिकारों को दिया जाता है वहीं स्त्री को किसी भी पायदान पर स्थान नहीं मिल पाता है।